अर्पणा पुष्पांजलि

दिसम्बर 2023

फिर तान सुना मेरे नन्दलाला,
बहु व्याकुल मन मेरा भयो।
तेरी झलक अब देखन को,
गोपाल नयन मोरे तरस रहयो।।

- परम पूज्य माँ

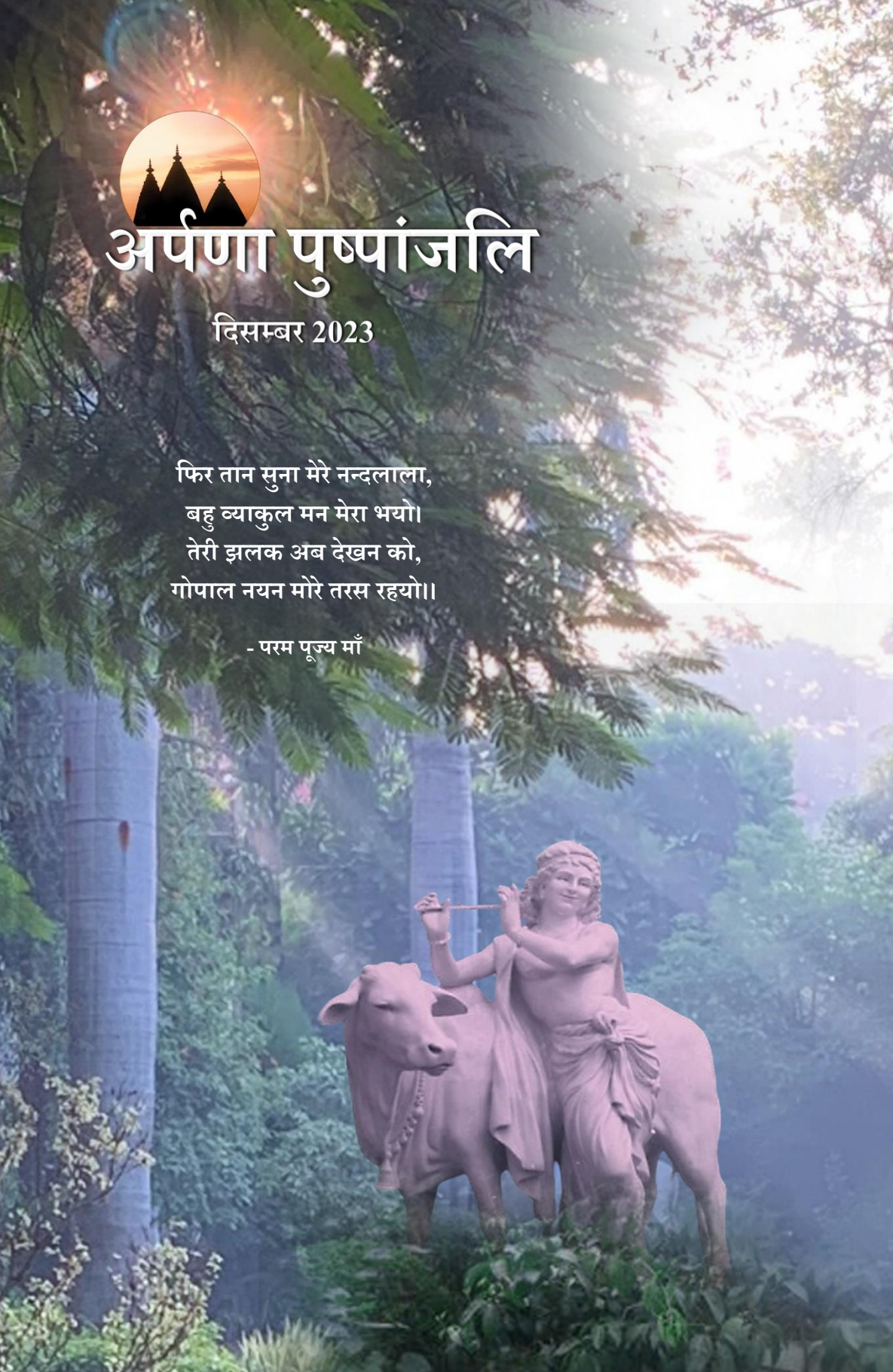

कुछ तुम भी मुख से कहो पिया, हम तोरी शरण में आये।
कोरे मन की चादर ले, तेरे रंग में रंगने आये।।

- परम पूज्य माँ

भक्त हृदय के उद्गार

अब ऐसे ज्ञान से क्या होगा, अज्ञान से ही वह भरा होगा।
मैं तो उसको ज्ञान कहूँ पिया, जब सामने राम खड़ा होगा।।

और तो कुछ न जानूँ पिया,
कुछ भी तो समझ न आये मोहे।
इक बेरी तू घर आओ पिया,
कर जोड़े पड़ूँ शरणा तोरे।।

तेरे दर्शन से जन्म मल मेरी, दूर हो ज्यों तूने दी हो बुहार।
इक बेरी प्रभु बस इक बेरी, तू भी तो आकर मुझे पुकार।।

अब बिनती करूँ मैं बार बार,
पिया इक बेरी तो तू भी पुकार।
कब से हूँ रही मैं पंथ निहार,
इक बेरी तू मुझको भी निहार।।

-परम पूज्य माँ
श्रीमद्भगवद्गीता 15/10
(17.1.1960)

अनुक्रमणिका

1. भक्त हृदय के उद्गार..

अब ऐसे ज्ञान से क्या होगा..

3. भगवान अर्जुन को समझा रहे हैं कि 'यही ब्राह्मी स्थिति है'..!

अर्पणा प्रकाशन - श्रीमद्भगवद्गीता - 'भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन' 2/70-72

8. ॐ राह पे मन टिका, परम सत्त्व तू पा लेगा!

मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 2/4

13. आप सृष्टि रचयिता ने मुझमें काया ले ली..

श्रीमती पम्मी महता

16. दीपावली - एक पत्र

श्रीमती पम्मी महता

17. गंगा के उस पार

सुश्री छोटे माँ

22. भक्ति और कर्म का समन्वय

संकलन - विष्णु प्रिया महता

26. जग मिथ्या कैसे..

परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

31. कुछ संस्मरण

श्रीमती सत्या महता

34. साधना के कुछ सोपान

संकलन - श्रीमती शीला कपूर

37. अर्पणा समाचार पत्र

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनीबद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*

सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल, 132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा दिसम्बर 2023 को प्रकाशित

भगवान अर्जुन को समझा रहे हैं कि 'यही ब्राह्मी स्थिति है'..

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/70

यहाँ स्थितप्रज्ञ की महिमा गाते हुए भगवान कहते हैं:

शब्दार्थ :

1. **जैसे चहुँ ओर से पूर्ण जल**
2. **महा प्रतिष्ठित अचल सागर में प्रवेश करता है,**
3. **वैसे ही सम्पूर्ण कामनायें जिसमें प्रतिष्ठित होती हैं (लय होती हैं),**
4. **वह शान्ति पाता है।**
5. **काम की कामना करने वाला नहीं (शान्ति पाता)।**

तत्व विस्तार :

ज्यों सम्पूर्ण जल, नदियाँ, नाले इत्यादि महासागर में विलीन हो जाते हैं तब भी समुद्र :

क) तनिक भी प्रभावित नहीं होता उन नदियों के जल से।

ख) स्वभाव नहीं बदलता सागर का कभी।

ग) वह कोई विशेष नवीन गुण नहीं पाता।

घ) उसका रूप नहीं बदलता।

ङ) वह छोटा या बड़ा नहीं होता।

च) वह कोई विकार प्राप्त नहीं करता और मलिन नहीं होता।

कोई बाढ़ नहीं आती समुद्र में नदियों के जल के कारण। उसी विधि संयमी पुरुष को सम्पूर्ण विषय:

1. ज़रा भी प्रभावित और प्रलोभित नहीं कर सकते।
2. उसमें संग उत्पन्न नहीं कर सकते।
3. उसे सुखी दुःखी नहीं कर सकते।
4. उसे अतृप्त नहीं कर सकते।
5. उसे चलायमान नहीं कर सकते।
6. उसका सतीत्व हरण नहीं कर सकते।
7. उस आत्मा से योग पाये हुए की बुद्धि को विचलित नहीं कर सकते।
8. उस आत्मवान को बाँध नहीं सकते।
9. उसमें कोई भी विकार उत्पन्न नहीं कर सकते।
10. उसका स्वभाव नहीं बदल सकते।
11. उस आत्मवान को दोषयुक्त और लिपायमान नहीं कर सकते।
12. उस आत्मवान को तन से पुनः बाँध नहीं सकते।

वह आत्मवान तो नित्य तृप्त और नित्य प्रशान्त होता है।

नन्हीं! उसका तन ही अपना नहीं रहा तो वह किसके लिये कामना करे?

कामनाओं से भरपूर, विषय अर्थ अर्थी इस शान्ति को नहीं पा सकते।

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/71

शब्दार्थ :

1. **जो पुरुष कामनाओं को छोड़ कर,**
2. **इच्छा रहित विचरता है,**
3. **वह निर्मम और निरहंकार हुआ,**
4. **शान्ति को पाता है।**

तत्व विस्तार :

जो सम्पूर्ण कामनाओं से मुक्त हुआ, इच्छा और कामना से रहित हुआ जग में विचरता है, वह **निर्मम** है अर्थात् :

1. उसका कुछ भी नहीं होता, उसका कोई भी नहीं होता।
2. उसका अपना तन ही अपना नहीं होता तो किसी और पर वह क्या हक़ रखेगा?
3. उसका किसी पर हक़ नहीं होता।
4. उसकी अपनी चाहना भी नहीं होती।
5. उसका अपना कोई लक्ष्य भी नहीं होता।
6. वह किसी ज्ञान को भी अपनाता नहीं।
7. तन, मन, बुद्धि ही अपने नहीं रहे तो तन के प्राण वह कैसे अपने कहे?
8. वह तो अपने प्राणों को भी नहीं अपनाता।

याद रहे :

क) उसका कोई नहीं, वह सबका है।

ख) उसकी अपनी चाह नहीं, पर वह दूसरों की चाहना पूर्ण करता रहता है।

ग) अपना काज कोई नहीं रहा, पर वह सबके काज करता है।

घ) अपने अपमान पर वह मौन रहता है, पर दूसरे के मान के लिये लड़ता है।

ङ) उसे प्यार मिले या न भी मिले, वह नित्य प्रेम ही करता है।

च) वह समत्व भाव में विचरता है।

'निरहंकार' को समझने के लिये पहले अहंकार को समझ ले :

अहंकार = अहं+कार

अहं का अर्थ है 'मैं'। तन के तदरूप होकर जीव अपनी ओर सम्बोधन 'मैं' कह कर करता है।

कार का अर्थ है :

1. 'मैं' को बनाने वाला
2. 'मैं' का निर्माता
3. आत्म सम्बन्धी।

अहंकार का अर्थ है :

1. आत्म सम्बन्धी अभिमान, जो अपने आपको दूसरों से अलग करे।
2. जो अपने आपको व्यक्तिगत बनाये।
3. अभिमान ही अहंकार है।
4. पर अपने आपको तन कहना भी तो अहंकार है।
5. 'मैं' की रचना ही तो अहंकार है।

जहाँ 'मैं' का कोई स्थान ही नहीं, उसे वह अपना आप मानना छोड़ देता है। तब वह निरहंकार हो जाता है।

नन्हीं! गुण से रचे हुए इस तन को अपना आप मान लेना अपनी तौहीन करना है। गुण गुणों के खिलवाड़ में 'मैं' का कर्तापन मिला देना भूल है, फिर किसी पर अपना अधिकार बना लेना भूल है।

भगवान कहते हैं जो संग रहित, कामना रहित, किसी पर अधिकार रहित और अपने तन के प्रति भी अहंकार रहित होते हैं, वह शान्ति को पाते हैं।

शान्ति का अर्थ नित्य आनन्द है, नित्य मौन है।

नन्हीं! एक बार फिर ध्यान से सुन! भगवान ने कहा स्थूल विषयों की कामना न रहे तो तुम्हारा मन संग से रहित हो जायेगा। बुद्धि ममत्व भाव यानि, किसी पर अधिकार न रखे, फिर 'मैं' अपने तन से 'मैं' पन रूप अहंकार छोड़ दे, तब यह शान्ति मिलती है, तब इस नित्य आनन्द में स्थिति होती है।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 2/72

भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. हे अर्जुन!

2. ब्रह्म को प्राप्त हुए की यह स्थिति है!

3. इसको पाकर जीव पुनः मोहित नहीं होता,

4. अन्तकाल में भी इस (निष्ठा) में स्थित होकर,

5. ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

तत्व विस्तार :

नन्हीं! भगवान अर्जुन को समझा रहे हैं कि 'यही ब्राह्मी स्थिति है'। भगवान पहले ब्राह्मी स्थिति की बता कर आये हैं। पुनः समझ कि भगवान क्या कह कर आये हैं! भगवान ने अर्जुन को कहा कि :

क) जीव तन नहीं है, जीव आत्मा है।

ख) फिर कहा, तू आत्मा से योग कर और तू आत्मवान बन।

ग) आत्मा से योग करने की विधि बताते हुए भगवान ने अर्जुन से समाधि की बात कही।

घ) भगवान ने यह भी कहा कि निर्द्वन्द्व, निर्योगक्षेम और आत्मवान बन।

ङ) आत्मा से योग के लिये जैसी बुद्धि की ज़रूरत है, उसे बताया।

च) तत्पश्चात् स्थितप्रज्ञ के लक्षण बताये, जिसे 'समाधि स्थित' भी कहा है।

छ) स्थितप्रज्ञता पाने की सहज विधि बताई।

ज) बुद्धि के राज़ खोल दिये।

अन्त में आत्मवान के और जग वालों के दृष्टिकोण में भेद समझाया। फिर संक्षेप में पुनः आत्मवान की आन्तरिक स्थिति बताते हुए कहा कि वह स्थूल में सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग कर, सूक्ष्म स्तर पर संग रहित होकर, बुद्धि के स्तर पर ममत्व भाव रहित होकर और अहंकार त्याग कर तथा ममत्व भाव छोड़ कर नित्य शान्त हो जाता है।

अब कहते हैं कि ब्राह्मी स्थिति यह ही है। नन्हीं! अब इस स्थिति को फिर से समझ ले :

1. जब तनत्व भाव छूट जाता है और 'मैं' का आत्मा से योग हो जाता है, उसे ब्राह्मी स्थिति कहते हैं।
2. तब जीव का अपने ही तन से और अपने ही मन से कोई प्रयोजन और संग नहीं रहता।
3. उसकी बुद्धि नित्य अप्रभावित रहती है। ऐसी बुद्धि न अपने गुणों से प्रभावित होती है न ही किसी और के गुणों से प्रभावित होती है। न ही उसकी बुद्धि को कोई द्वन्द्व प्रभावित करते हैं।
4. जब वह तनत्व भाव रहित हो जाता है तब वह जो तन उसका था, उसके प्रति भी उदासीन हो जाता है।
5. जब तन ही उसका नहीं रहा तो वह तन की परवाह नहीं करता। तन को जो भी मिले, शुभ मिले या अशुभ मिले, वह उदासीन ही रहता है।
6. राग द्वेष भी तन के नाते ही होते थे जब तन से ही नाता नहीं रहा, तो अब राग द्वेष कौन और किसके लिये करे?
7. फिर जब तन ही उसका अपना नहीं रहा तो वह और किसी को किस नाते अपना कहे? ऐसी स्थिति में औरों पर अधिकार स्वतः ही छूट जाता है, यानि ममत्व भाव का अभाव स्वतः ही हो जाता है।
8. जब तन ही उसका नहीं रहता तो कर्तृत्व भाव स्वत: ही छूट जाता है, क्योंकि कर्म

तन करता है और वह आप तन नहीं है तो तनो कर्म भी उसके अपने नहीं हैं।

9. इस तरह तन के उपभोगों से भी उसका नाता छूट जाता है, यानि उसका भोक्तृत्व भाव भी छूट जाता है।

10. ऐसा आत्मवान जो आत्मा से योग कर चुका है, वह नित्य समाधिस्थ ही होता है। एक और बात जो यहाँ समझनी चाहिये, वह समाधि के विषय में है।

क) मौन स्वरूप नित्य समाधिस्थ, चलते, फिरते, बोलते और बैठते भी हैं।

ख) उनकी बुद्धि तनत्व भाव से और विषयों से आवृत नहीं होती। न ही वह मन के विषयों से आवृत होती है।

ग) उनकी बुद्धि 'मैं' और 'मम' भाव से आवृत नहीं होती।

नन्हीं! जिसकी बुद्धि नित्य निर्लिप्त है, वह नित्य समाधिस्थ ही है, और जो आत्मवान नित्य समाधिस्थ है, वह कर्म कुशल होता है, यह भगवान ने कहा है। वास्तव में तन उठता, बैठता, चलता, फिरता और सब कर्म करता है। वह तो नित्य आत्मा में स्थित, तन की क्रियाओं को मानो द्रष्टावत् दूर से देखते हैं।

भगवान ने यह भी कहा है कि उनका तन जिसे जग देखता है, वह सब कुछ करता है, पर फिर भी वह स्वयं तो मौन स्वरूप नित्य अकर्ता है। भगवान कहते हैं आत्मवान इस स्थिति को पाकर फिर कभी मोह को प्राप्त नहीं होता।

1. वे तो साकार होते हुए भी निराकार स्वरूप होते हैं।
2. वे नाम रूप वाले होकर भी बिन नाम और रूप के होते हैं।
3. वे तो बातें करने वाले होकर भी नित्य मौन स्वरूप होते हैं।
4. वे तो सब करने वाले होकर भी नित्य अकर्ता होते हैं।
5. वे तो निर्गुण स्वरूप होकर भी गुणों का भण्डार होते हैं।
6. वे, जिन्हें कोई झुका नहीं सकता, अपार झुके हुए होते हैं।

यह राज़ तब ही समझ आ सकता है, जब तुम आत्मवान को समझ लो।

ऐसी स्थिति को प्राप्त होने के बाद जन्म या मृत्यु कोई अर्थ नहीं रखते। जन्म और मृत्यु केवल तन के नाते होते हैं और वे तो तन से अपना नाता ही तोड़ चुके हैं।

ऐसे लोग कब जन्मते और कब मरते हैं? ऐसे लोग तो ब्रह्म में ब्रह्म ही हो जाते हैं, पुनः मोह का सवाल ही कहाँ रहा?❖

ॐ तत्सदिति श्री मद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्याय:।।2।।

ॐ राह पे मन टिका, परम सत्त्व तू पा लेगा!

गतांक से आगे..

प्रणवो धनु: शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।।
मुण्डकोपनिषद् - 2/2/4

शब्दार्थ:

यहाँ ओंकार ही धनुष है; आत्मा ही बाण है और परब्रह्म परमेश्वर ही उसका लक्ष्य कहा जाता है; वह प्रमाद रहित मनुष्य द्वारा ही बींधा जाने योग्य है अत: उसे बेध कर बाण की तरह उस लक्ष्य में तन्मय हो जाना चाहिये।

तत्व विस्तार:

प्रणव को यह धनुष कहें, आत्म उसका बाण कहें।
ब्रह्म ही उसका लक्ष्य कहें, ओम् ही उसका नाम कहें।।1।।

प्रमाद रहित सावधान, धीर साधक जाने है।
बेधन योग्य यह रे है, सत्त्व सार वह जाने है।।2।।

तन्मय लक्ष्य में हो जाये, बाण ज्यों लक्ष्य से जाये मिले।
एक एक में एक होये, जीव परम में जाये मिले।।3।।

ओंकार ही धनुष तेरा, मन डोरी रूप बन्धा हुआ।
भाव मिलन जिज्ञासा सों, वह मन हो भरा हुआ।।4।।

ध्यान मग्न वह हो जाये, आत्म तीर रे चल जाये।
परम मिलन को देख ले, सत्त्व राह पर चल जाये।।5।।

तरकश तो वह दूर रहा, वह आवरण तो छोड़ चुका।
तैजस में ही ओंकार, सों वह नाता जोड़ चुका।।6।।

मनोलोक में आ बैठा, साधन ध्यान था हो रहा।
मनोमल आवरण वह, पल पल था रे धो रहा।।7।।

ओंकार धनुष पे बाण, स्थिर रूप धरना होगा।
मन को भी रे जान ले, एकचित्त करना होगा।।8।।

गर इक पल भी डोल गया, लक्ष्य बेध न पायेगा।
पूर्ण यत्न रे साधक का, देख विफ़ल हो जायेगा।।9।।

बाह्य विषय से लिप्त मन, नाम रूप जो अपनाये।।
बहुवृत्ति पूर्ण मनी, लक्ष्य को बेध ही न पाये।।10।।

विश्व सों मुखड़ा मोड़ करी, वृत्ति प्रवाह भी छोड़ दे।
एकनिष्ठ जब हो जाये, लक्ष्य सों नाता जोड़ दे।।11।।

ओम् राह पे मन टिका, परम सत्त्व तू पा लेगा।
नाम ध्यान सों उठ करी, परम सत्त्व समा लेगा।।12।।

धनु बिन ज्यों तीर कभी, लक्ष्य तलक न पहुँच सके।
ओम् बिना कोई जीव, स्वरूप तक न पहुँच सके।।13।।

मनोमौन गर पाना है, मन उसी में जोड़ दे।
धनु पे लागी डोरी सम, राम नाम में जोड़ दे।।14।।

निरन्तर नाता ओम् से हो, संग इक पल न छूटे।
सावधान हो मन खेंचे, मनो डोरी तव न टूटे।।15।।

राम राम कहते कहते, मन निर्मल हो जायेगा।
नाम रूप ओम् के आसरे, लक्ष्य बेध तू पायेगा।।16।।

हो एक मना एकचित्त, वृत्ति प्रवाह बंद होये।
संकल्प विकल्प न रहे, नाम मग्न ऐसा होये।।17।।

ज्ञातव्य उसी को जान लिया, प्राप्तव्य उसी को जान लिया।
अन्य चाह इक न रहे, जब लक्ष्य उसी को जान लिया।।18।।

वृक्ष फल बहु खा चुका, खा खा कर जी भर गया।
बहु जन्म पाये इस जग में, अब जी जी के जी भर गया।।19।।

विश्व की चाहना नहीं रही, स्वर्ग सों भी उठ गया।
मनोराज्य वह क्या चाहे, अब मन सों भी उठ गया।।20।।

माया खेल रे देख करी, आज माया सों उठ गया।
माया क्या भरमायेगी, मन मन सों ही उठ गया।।

बाण देख रे स्वत: भया, एक मना जब हो गया।
ओम् कमान पे चढ़ी चला, और परम में खो गया।।21।।

ओंकार को धनुष कहें, त्रिपाद ओम् के कहते हैं।
उत्पत्ति स्थिति लय भी, धनु रूप ही कहते हैं।।22।।

स्थूल रूप वह बाह्य जग, इन्द्रिय लोक की कहते हैं।
अन्नमय यह तनोलोक, तम लोक की कहते हैं।।24।।

क्षेत्र रूप यह वृक्ष रूप, यह फल रूप की कहते हैं।
महाभूत यह कर्म रूप, विश्व रूप की कहते हैं।।25।।

बाह्य लोक अरे पृथ्वी लोक, भाव प्रवाह की कहते हैं।
शास्त्र लोक विभिन्न लोक, अधिभूत की कहते हैं।।26।।

फिर स्वप्न की कहते हैं, आधुनिक कर्म की कहते हैं।
सूक्ष्म तन मनोलोक, स्वभाव की भी कहते हैं।।27।।

स्थिति हिरण्यगर्भ कहें, आर्न्तप्रज्ञ की कहते हैं।
प्राण रूप मनोमय, विज्ञानमय भी कहते हैं।।28।।

रजोगुण भोगी पक्षी, तप की भी कहते हैं।।
आन्तर लोक तैजस जो, जीवात्म की कहते हैं।।29।।

भाव लोक यह संग लोक, श्रद्धा लोक की कहते हैं।
महाभूतन् में तन्मयता की, बात यहाँ पर कहते हैं।।30।।

सुषुप्ति अंग रे ओम् का, कर्माशय भी कहते हैं।
भविष्य में जो रूप धरे, कर्म बीज की कहते हैं।।31।।

लय अवस्था मौन भी, हृदय लोक की कहते हैं।
आनन्दमय समाधि में, सत्य लोक की कहते हैं।।32।।

द्रष्टा पक्षी ईश्वर जो, द्यूलोक की कहते हैं।
प्रज्ञा प्रकृति आत्म लोक, मौन अद्वैत की कहते हैं।।33।।

त्रिपाद यह मिल करी, एक धनुष है कहते हैं।
भावना तो रे वहाँ चढ़े, परम मिले रे कहते हैं।।34।।

परम ब्रह्म परमेश्वरा, ही तो लक्ष्य है कहते हैं।
प्रमाद रहित योगी पाये, साधन सत्त्व यह कहते हैं।।35।।

हो एक चाह हो एक लग्न, कर्मातीत को पा वह ले।
महा कारण अखण्ड रूप, गुणातीत को पा वह ले।।36।।

तुरिया अवस्था वह ही है, जिसे परम मौन रे कहते हैं।
महद् तत्व यह परम तत्व, अद्वैत तत्व रे कहते हैं।।37।।

उपासना ही रे राह वह है, श्रेय पथ अनुयायी हो जाये।
परम मिले बस परम मिले, लक्ष्य में मन खो जाये।।38।।

धनु से उठ स्वरूप को, पाने आत्म चल पड़े।
त्रिपाद वह ओम् के, त्यज कर ही तो चल सके।।39।।

आत्म तीर ही जाये है, वहाँ जीव पहुँच नहीं पाये है।
मन बुद्धि चित्त अहंकार, धनु में ही रह जाये है।।40।।

तीर धनुष जो छोड़ दे, चाहुक मन बुद्धि त्यजे।
परम सत्त्व तो बेध सके, ओम् पाद सों जब उठे।।41।।

अमात्रा जो धनु परे, उसमें ही रे समाना है।
अज्ञान रूप मदिरा जग, अब तो छोड़ ही जाना है।।42।।

उपासना के वह कहें गर, बीज रे लय हो जायें।
मायिक में उपासना हो, माया से फिर उठ जाये।।43।।

परम तलक वह जा पहुँचे, एक में एक ही हो जाये।
आत्म ही रे जाये करी, परमात्म में रे खो जाये।।44।।

17-9-61

आप सृष्टि रचयिता ने मुझमें काया ले ली..

श्रीमती पम्मी महता

आंतर में, मुझमें आपने काया क्या ली, अंतर्मन आनन्द में हिलोरे लेने लगा। आप श्री हरि माँ अपनी विभूतियों से नवाज़ने लगे.. अपनी समतल भूमि पर उतार लाये.. कितनी सुन्दर अनुभूति थी यह!

सच ही, यह अनुभूति भी कि आप सभी के हो कर ही मेरे हो.. इस भाव ने आनन्दित कर दिया। आत्म-विभोर हो उठी! आप श्री हरि माँ की सर्व-व्यापकता को देखी देखी हैरतज़दा हो रही थी।

आप श्री हरि माँ प्रभु जी के दीदार इस प्रकार होंगे, यह तो जानती ही नहीं थी.. क्योंकि आपकी मुहब्बत में छाया जो नहीं होती। निर्मल प्रेम ने मूर्त्त रूप धारण कर लिया, धन्य धन्य हो गई आप से आपकी यह कनीज़!

आपने यूँ तो कभी मेरा हाथ छोड़ा ही नहीं था.. मगर, आज एक बार फिर ऐसा लगा, आपने मेरा कर ही नहीं; पूर्णतया मुझे ही थाम लिया हो। माँ, क्या यही विराट रूप के आपके दर्शन होते हैं?

अद्भुत, अतीव अद्भुत! आप प्रभु माँ की इस देन को देख देख कर आपके प्रति हे श्री हरि माँ, इस निमानी के हाथ जुड़ गये.. तन- मन, सब ही आपके श्री चरणन् में झुक गये!

अद्भुत, अतीव अद्भुत.. आँखें मूँद कर आप ही आपको निहारती हुई, निरन्तर निहारे चली जा रही थी। इस करुण कृपा प्रसाद को शब्दों में बयां नहीं कर पा रही थी.. बस हृदय आँसुओं से भरा हुआ, रुख़्सार से ढलता ही चला जा रहा था। पूर्णतया भीग गया था मेरा आंतर-बाहर.. ऐसा दिव्य प्रसाद! जिसे पाई कर धन्य धन्य महसूस कर रही थी। हक़ीक़त की इस धरा पर खड़ी आपको नत श्री बारम्बार देते हुये, आप ही को नमन दे रही थी!

अद्भुत, अतीव अद्भुत.. आपकी इबादत का दूसरा नाम मुहब्बत है। इसका एहसास तो आप श्री हरि माँ ने बहुत पहले ही करा दिया था.. मगर मुहब्बत की इस पराकाष्ठा ने तो जैसे मोल ही ले लिया मुझे! आपके प्यार की लूट में क्या क्या नहीं दिया आपने.. मैं तो कभी पात्र ही नहीं थी! मगर आपने भी तो पात्र-कुपात्र कभी देखा ही नहीं.. कैसे चुन कर मुझे, इस मनोधरा पर आपने अपनी लीला रचा दी!

हे लीलाधर, सच ही आपकी अपरम्पार महिमा में आपकी लीला का यह विस्तार.. देख कर और आपकी निराली व अनूठी छवि को.. हृदय व आँखों में सँजो कर आपके श्री चरणन् में झुक गई मन ही मन! यह मनोभूमि, यह हृदय-स्थली, आपके काया लेते ही कैसे पावन हो गई!

मेरे आंतर के अँधेरे इस क़दर ज्योतिर्मय हो गये.. आप और आपकी ज्योत्सना की कृपा से.. जिन प्रभु माँ ने मुझे आवाज़ दे कर बुलाया था, अब उन्होंने ही मेरे आंतर में काया ले ली! आप श्री हरि जगद् जननी के इतने पावन क़दमों के भव्य दर्शन निरन्तर होते रहे और इसके चलते आज तो आप असीम ने दिखा दिया कि प्रेम की कोई सीमा होती ही नहीं! आपकी प्रीत तो सच ही इबादत है.. आप ही को सिजदे में धर, हे रब साईं, आपको सिजदा देती हूँ और बार बार इन्हीं क़दमों में लोटती ही चली जा रही हूँ।

कैसे धन्यवाद करूँ आपका, हे श्री हरि माँ प्रभु जी.. बस दुआ के लिये ही यह हाथ उठे रहें! आपकी मेहरबानियों से भरे अपने दामन को देखते हुये व आपके आशीर्वादों से भरे आपके हाथ महसूस करते हुये.. यही दुआ है मेरी आपसे कि यह जीवन सदा सदा के लिये आपकी अमानत हो जाये और आपकी हर देन, जिससे आपने नवाज़ा हुआ है.. मेरे जीवन में धारण हो जाये! अब तो यही प्रार्थना करती हूँ कि आपके प्रति असीम श्रद्धा भक्ति भाव से, अतीव प्रेम व प्रेमपूर्ण हृदय से पूर्णतया आपके श्री हरि चरणन् में अर्पित हुई रहूँ! आमीन।

हे श्री हरि माँ, आपका इस सगुण वेश में अवतरित होना.. यह हमारे लिये कैसी सुन्दर मिसाल बन गई है.. जिसे कोई भी झुठला नहीं सकता- न ही इसां, न ही ज़माना! ..क्योंकि जो अपने आप में सम्पूर्ण है, उसे कौन कलंकित कर सकता है। कौन है, जो आपके क़दमों को रोक सकता है.. कोई भी विरोध आपको विचलित नहीं कर सकता.. जो पूर्ण की पूर्णता में समाया हुआ है!

पूर्ण सृष्टि जिसमें समाई हुई है, उनको कोई शै छू नहीं सकती। धन्य हैं यह आँखें, जिन्होंने इस श्री विग्रह के दर्शन किये हैं.. धन्य हैं यह कान, जिन्होंने इसकी महिमा का सामगान सुना है। धन्य है वह रहगुज़र, जिसपे चलते आपके क़दमों ने ही इसे नवाज़ा है.. इन्हीं नक्श पे चलने को व इसी रहगुज़र पर बढ़ने को क़दम उठा पाने की सामर्थ्य आपसे पा जाता है..

आपकी प्रकट लीला का उत्सव, मेरी शरीक-ए-ज़िन्दगी बनाने वाली हे श्री हरि जगद् जननी माँ प्रभु जी, आपको शतः शतः प्रणाम! हरि ओऽम्

हे माँ, आपने मुझे में काया ली है तो आप ही इसके क़दम अपने क़दमों के पीछे पीछे इसे चला कर इसकी मंज़िल तक ले जाईयेगा, जहाँ जाकर आप ही आप में विराम मिल जाता है।

आप माँ यूँ ही लिवा ले जायेंगे न मुझे, अवश्य ले जाईयेगा.. मुझे आप माँ की इंतज़ार रहेगी। हे श्री माँ, मेरी अनुनय विनय स्वीकार करी, मुझे अनुगृहित कर दीजियेगा हमेशा की तरह! हरि ओऽम्! हरि ओऽम्! हरि ओऽम्!

हे कृपालु दयालु नाथ, आपने आंतर में काया ली है तो ज़ाहिर है, आप ही आप चलेंगे और यह कनीज़ पाछे पाछे चलती चली जायेगी आपके.. जहाँ तलक चलायेंगे! ख़ुदा करे, चलती चलूँ आपकी रवानगी में बादस्तूर! यारब, चलती चलूँ! आमीन। हरि ओम् ❖

दीपावली - एक पत्र

श्रीमती पम्मी महता

(13 नवम्बर 2012)

परम वन्दनीय परम पूज्य श्री हरि माँ प्रभु जी, आप संग बिताई हर दीपावली आज भी उतनी ही ताज़गी भरी है हम सभी की यादों में.. आप ही के संग बिताते हुये हर दीपावली बहुत ही ख़ुशगवार, शुभ व मंगलमय होती है।

आप जब संग में हैं तो उमंगों से भरे दिल से आपको याद करते हुये, चिरागों की इस शाम का आनन्द ही कुछ और होता है इसीलिए सिजदे में घिर कर हम सभी इन दिनों को बहुत ही प्यार से मिल कर मनाते हैं। हमें यह भी पता है माँ, कि आपके आशीर्वाद व प्यार हमारे संग संग चलते हैं.. जो हमें लगता है आप कहीं नहीं गये! ..क्योंकि आपके क़दमों की दस्तक तो ज़हन में पड़ते हुये हमें हमारी मंज़िल का पता देती रहती है। बहुत बहुत धन्यवाद परम वन्दनीय श्री हरि माँ!

ईश्वर करे, जो भी मोती बिखर गये हैं.. आपके प्यार के तन्तुओं में पुनः पिरोये हुये ही आपके क़दमों पर चलें। इसी विनीत प्रार्थना व धन्यवाद के साथ हम सभी आपके संग यह दिवाली भी मना रहे हैं। ईश्वर करे, आप माँ की कृपा अतीव कृपापूर्ण हो कर हम सभी पर बरसती रहे।

सच माँ, आपकी रहगुज़र तो एकतरफ़ा है.. आप ही आप हमारे लिए चलते हैं। हम ही मुक़ाम बना कर दो-तरफ़ा.. अपना ही रास्ता बना लेते हैं और मन-मर्ज़ी से रास्ता तय कर लेते हैं.. तभी भटक कर, अपने ही अंजाम को देख कर हमारे दिल रो कर भी नहीं रोते; उल्टा, अहंकार और स्वार्थ की चोटी पर चढ़ कर नित नये अपराध करते जाते हैं। मुझे याद है आप कहा करते थे, 'जब भटक कर आप ही थक जायेंगे तो तभी आपके क़दम वापिस मुड़ेंगे।'

गर इन शब्दों के पीछे जायें तो आपकी वाणी की सत्यता के रूबरू आप देर सवेर करवा ही देते हैं। ईश्वर करे, इस दीपावली में आंतर हमारे, आप ही की ज्योत्सना से एक बार फिर भर कर हमें हमारे ही अँधकारों से निकाल हमें आप अपनी रोशनाई में ले चलें। यही अनुनय विनय व विनीत प्रार्थना है हमारी, 'हमारे दिलों की बस्ती झमेलों से न भर कर आप ही आप से भरी रहे!'

ईश्वर करे, यह दिवाली की शाम सच ही आपके नाम हो जाये। हरि ओइम्।

सच में ही दीवाली मना पायें.. यूँ ही आपका कृपा प्रसाद मिला रहे हम सभी को।

असीम आदर व प्यार सहित, आपके अपने, हम सभी!❖

गंगा के उस पार

सुश्री छोटे माँ

प्रातः उठते ही आज से 32 वर्ष पूर्व, 2 सितम्बर 1962 की याद आ गई। आज ही के दिन, पूज्य माँ ऋषिकेश गये और साथ ही मुझे भी जाने का सौभाग्य मिला।

आइये! आज आपको भी उसी दिवस के दर्शन करवाने के लिये वहीं ले चलते हैं। पूजाकाल में एक बार 1960 में भी पूज्य माँ ने ऋषिकेश जाने की बात डॉक्टर मेहता (जिन्हें हम आज पापा जी कहते हैं) से की थी। साधनाकाल में वह पूज्य माँ के गुरु तुल्य थे। यह विचार जब पापा जी के सम्मुख पहुँचा तो उन्होंने इनकार कर दिया। वह कहने लगे अभी जाने का लाभ नहीं होगा।

पापा जी ने अपनी मान्यतानुसार पूज्य माँ को समझा दिया कि यदि आप अभी चले गये तो उचित नहीं होगा। पूज्य माँ उनकी बात को सुनकर चुप कर गये और उनकी आज्ञानुसार उस विचार को सहज ही भुला दिया। उस समय मानो भगवान भी यही चाहते होंगे और रेखा का भी वही निर्णय होगा।

मार्च 1962 को पुनः सहज ही यह भाव प्रेरणा बन कर बह गया। उन दिनों पूज्य माँ चंडीगढ़ में थे। उस समय की कमेटी की प्रेज़िडेन्ट मिसिज़ शहानी से उन्होंने बात करी कि वह एक वर्ष की छुट्टी

लेकर ऋषिकेश जाना चाह रही हैं। पूज्य माँ के वाक् सुनकर सहज ही उनके मुख से निकला, 'फिर हमारा क्या बनेगा?'

पूज्य माँ ने सारे कार्यालय का काज बहुत सुचारू ढंग से चला रखा था। मिसेज़ शहानी को एकदम यही विचार आया कि सारे काज कैसे सम्पन्न होंगे? पूज्य माँ ने उनकी घबराहट देख कर उनसे पूछा, 'आप ही बतलायें मैं कब जाऊँ?' उन्होंने मुसकारते हुए कहा कि 'आप हमें 6 महीने और दें दें।' तब पूज्य माँ ने कहा, 'अच्छा! मैं आज से 6 महीने बाद 2 सितम्बर 1962 को चली जाऊँगी।'

पूज्य माँ के वाक् सुन कर वह बहुत प्रसन्न हुईं। साथ ही साथ पूज्य माँ ने कैंप इत्यादि लगवाने का सारा कार्यक्रम भी बदलवा दिया, ताकि साल भर के काम उनके जाने से पहले ही सम्पन्न हो जाएँ। तब पूज्य माँ ने सारे वर्ष के जो भी कैंप लगने थे, उस सारे काज का बीड़ा उठा लिया।

उन दिनों पूज्य माँ पंजाब यूनिवर्सिटी में खेल विभाग के निर्देशक पद पर थीं, इसलिये वह चंडीगढ़ में हर सप्ताह जाया करती थी तथा गर्मी की छुट्टियों में वहीं पर होती थी। मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा जब मैंने देखा.. एक ओर तो जाने की तैयारी हो रही थी, दूसरी ओर कैंप चल रहे थे, तीसरी ओर सारे प्रबंध किये जा रहे थे और दफ़्तर का काम सौंपने की भी तैयारी हो रही थी। उस समय लगभग 20 घंटे पूजा गृह में व्यतीत होते। वहीं से दफ़्तर का काज भी चलता। अतिथि सत्कार भी विधिवत् होता। सबसे बड़ी बात यह थी कि उसी समय हमारा चण्डीगढ़ का घर भी पूज्य माँ स्वयं बनवा रहे थे।

पूज्य माँ ने जब देखा कि मेरे पिता जी अपनी ज़मीन को बेचने के लिये तैयार हैं, क्योंकि वह घर बनवाने में कठिनाई का अनुभव कर रहे हैं तो पूज्य माँ ने पिता जी को कहा, 'आप यह ज़मीन मुझे दे दें, यही समझें कि मैंने यह ख़रीद ली है।' सो उस पर उन्होंने घर बनवाना भी आरम्भ कर दिया।

इस प्रकार चहुँ ओर से इतने काज थे कि एक पल का भी समय नहीं होता था। यही नहीं, गर्मियों की छुट्टियों में पापा जी की बेटियों अन्नु, मिन्नी को भी वहाँ बुलाया हुआ था। मैं भी वहीं पर थी। कई बार कार्यालय के कार्यवश उनको बाहर भी जाना पड़ता था। उन सब परिस्थितियों में सबको मना कर ख़ुश रखना भी साथ साथ चल रहा था। आज इस विषय पर विचार करूँ तो अवाक् रह जाती हूँ।

सारे काज चल रहे थे। किसी प्रकार की कहीं मानसिक चिंता हो, इसका तो प्रश्न ही नहीं था। समय पर सब कैंप समाप्त हो गये। दफ़्तर का काज भी पूरा हो गया। हमारा घर भी बन गया। जाने से पूर्व

उन्होंने घर को अपने माली की देख रेख में छोड़ दिया। जिस दिन 2 सितम्बर को ऋषिकेश जाने लगे, उसकी चाबियाँ उन्होंने मेरे पिता जी के हाथ में पकड़ा दीं।

जब हमारे ऋषिकेश जाने की तैयारी हो रही थी तो मेरे बीबी जी व पिता जी बहुत चिंतित थे कि मैं कहाँ जा रही हूँ? उनका मोह राहों में आ रहा था। ज्यों ही पूज्य माँ को इस बात का पता चला, वह चंडीगढ़ से जालंधर आये। बीबी जी, पिता जी को परिवार सहित लेकर ऋषिकेश के लिये चल पड़े। जालंधर से ऋषिकेश लगभग 10 घंटे की यात्रा थी। इस यात्रा में कोई ऐसा नहीं था, जिससे कोई, किसी प्रकार का वार्तालाप कर सके।

ऋषिकेश पहुँचकर माँ ने उन्हें वह स्थान दिखलाया जहाँ पर हमने ठहरना था। कुछ इस प्रकार से भी आश्वासन दिया कि 'आप निश्चिंत रहें, आपकी बेटी यहाँ प्रसन्न रहेगी।' थोड़ी देर वहाँ रुकने के पश्चात् रात्रि को ही वापिस लौट आये। पूज्य माँ स्वयं ही लगभग 18 घंटे गाड़ी चलाते रहे! उस समय मैंने यह तो नहीं सोचा कि माँ को कैसा लगेगा, मेरा तो केवल एक ही भाव था कि अब मेरे माता पिता प्रसन्न रहेंगे, चिंतित नहीं होंगे, मेरे लिये जाना भी निष्कंटक हो जायेगा। पूज्य माँ ने मानो शबरी की भाँति सारे काँटे उठा कर मेरे ऋषिकेश जाने के लिये रास्ता साफ़ कर दिया।

पहली सितम्बर 1962 को पापा जी की गाड़ी, जो हमारे साथ ऋषिकेश जा रही थी, जालंधर से चली। उसमें मेरे बीबी जी, पिता जी परिवार सहित हम सब चंडीगढ़ आ गये। अब उनके साथ विशेष

विषय पर कोई बातचीत तो हो नहीं सकती थी। रात्रि को सबको पिक्चर देखने भेज दिया। प्रातः उन्हें उनके घर की चाबी सौंप कर पूज्य माँ, एक माली की पत्नी, ड्राईवर और मैं, हम सब गाड़ी में ऋषिकेश चल पड़े।

उस समय मैं तो बहुत प्रसन्न थी कि मुझे माँ के साथ जाने का सुअवसर मिल रहा है, पूज्य माँ मौन थे। सहज ही रेखा मानो उनको स्वतः ही प्रेरित करके आगे ले जा रही थी। मेरे घर वालों की उदासी तो सहज थी, परन्तु मेरे जाने का उनको दुःख था भी और नहीं भी। मेरी ओर से पूज्य माँ ने उन्हें पूरी तरह आश्वस्त कर दिया था।

ऋषिकेश जाने से पूर्व जब मैं जाने की तैयारी कर रही थी, तो पूज्य माँ ने कुछ इस प्रकार कहा, 'जो जो सामान तुम साथ लेकर जाना चाहती हो, वह ले जा सकती हो। तुम तो संसार छोड़ कर ऋषिकेश नहीं जा रही.. बल्कि, अपने प्यार में बँधी मेरे साथ जा रही हो। तुम तो यह जानती भी नहीं कि ऋषिकेश में जाना कहाँ है? कहीं ऐसा न हो कि ऋषिकेश में जा कर कभी किसी वस्तु की याद आ जाए और तुम्हारा मन दुःखी हो जाये।'

मैंने भी सामान बहुत अधिक एकत्रित कर लिया था। अगले दिन 2 सितम्बर को हम ऋषिकेश के लिये चल पड़े। गाड़ी में भी खूब सामान था। 2 सेवक पहले भी सामान लेकर जा चुके थे। सब प्रकार के प्रबंध होने पर भी हमारी नई गाड़ी रास्ते में पंचर हो गई। उस दिन रविवार था। कठिनाई से पहिया ठीक करवाया तो हम शीली बहिन (श्रीमती शीला कपूर) के घर मधुबन पहुँचे। शीली बहिन उन दिनों सारी 'उर्वशी' गाकर पढ़ा करती थीं। उनके घर में उन दिनों 'उर्वशी' के श्रोता गण शीली बहिन की माता जी (कौशल्या बहिन जी) और उनकी नानी जी (श्रीमती नौबत राय भंडारी) तथा उनके पति कपूर साहिब थे। जब हम वहाँ पहुँचे तो दूर से ही चहुँ ओर 'उर्वशी' की ध्वनि गूँज रही थी।

हम कुछ देर वहाँ रुके, खाना खाया और चलने के लिये तैयार हो गये। उस समय कपूर साहिब ने कहा, 'आप ऋषिकेश क्यों जाते हैं? हम यहीं पर ही आपके लिये आश्रम बनवा देते हैं।' माँ यह सुनकर मुसकरा दिये और हम ऋषिकेश चल पड़े।

हमें पहले ही देर हो गई थी, गाड़ी नई होने के कारण धीरे धीरे चल रही थी। सो जब हम ऋषिकेश पहुँचे, तो अँधेरा हो चुका था। उन दिनों गंगा जी में बाढ़ के कारण कोई भी नौका साँझ की बेला नहीं चलती थी। गाड़ी से उतर कर जब इस पार ठहरने के लिये स्थान का पता किया, पहले वह लोग कमरा देने के लिये मान गये। जब उन्हें पता चला कि वहाँ हम केवल एक रात ही ठहरेंगे तब उन्होंने स्थान देने से इनकार कर दिया।

ज्यों ज्यों रात्रि का अंधकार बढ़ता जा रहा था, घाट पर भीड़ भी कम होती जा रही थी। धीरे धीरे वहाँ पूज्य माँ, माली की पत्नी और मैं, बस तीनों ही रह गये। मेरा मन भयभीत हो रहा था और मनोमन दोष दे रहा था कि ये लोग अच्छे नहीं है। पूज्य माँ ने मुझे समझाया कि दोष देकर किसी भी समस्या का समाधान नहीं होगा। हम यह क्यों न कहें कि भगवान आज हमें जीवन में जीने का नया ढंग सिखला रहे हैं! आयु पर्यंत उन्होंने हमें सब कुछ दिया, केवल कुछ घंटों के लिये यदि खुले आसमान के नीचे गंगा मैया की गोद में सोना भी पड़ जाये, तो इसमें दुःखी सुखी होना नहीं बनता।

इस प्रकार हम तीनों घाट पर चादर बिछा कर सो गये। आँख कब लग गई कुछ पता ही नहीं चला। जब जागे तो देखा कि दिन चढ़ आया था। मंद मंद पवन चल रही थी। लोग प्रातः स्नान करने के लिये घाट पर आ रहे थे। पावनी गंगा में स्नान कर हम सब भी नौका में बैठ कर परले पार पहुँच गये। इसके बाद हम वहाँ पर लगभग डेढ़ वर्ष रहे। पूज्य माँ कई बार मुसकार कर मुझे कहते 'बेटा! वही घाट दूर से दिखलायी दे रहा है, क्या अब भी वहाँ चल कर सोने का अभ्यास करना है?' उनकी बात सुनकर मैं हँस पड़ती।

यही देख कर मन आज भी गदगद हो जाता है, कि पूज्य माँ को जो भी मिला, उनके प्यार में किसी प्रकार का परिवर्तन आया हो, ऐसे दर्शन उपलब्ध नहीं होते। सच ही माँ धन्य हैं!❖

भक्ति और कर्म का समन्वय

(परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त प्रश्नोत्तर)

संकलन- विष्णु प्रिया महता

प्रश्न : हम जैसे साधारण लोग भगवान की भक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं ?

पूज्य माँ : भाव सहित भगवान को पुकारो तो सही, उनसे बात करने की कोशिश तो करो! मीरा जी, सूरदास जी, और अन्य अनेकों भक्तों ने भगवान को पुकारा और उन्हें भगवान के दर्शन हुये; उस पुकार में उनको चैन भी मिला। एक बार तुम भी पुकार के देखो तो सही, अपने हृदय की बात करो उनसे; वह सुनते हैं और उत्तर भी देते हैं, इसमें तनिक भी संशय नहीं! वह आपके साथ क़दम से क़दम मिलाकर चलते भी हैं। यह मत सोचो कि ऐसा हो नहीं सकता!

यह हक़ीक़त है, यह सच है कि तुमने नहीं देखा राम को! परन्तु अनेकों भक्तों ने देखा है, उन्होंने कहा है कि राम जी आते हैं! किसी की बात मान लो, और उनसे अपने हृदय की बात करो।

तुम्हारी बुद्धि बस यहाँ तक पहुँच सकती है कि जो भक्तों ने कहा, जो सन्तों ने, ऋषियों ने कहा, फिर जो अवतारी पुरुषों ने कहा, वह बात झूठ नहीं हो सकती। किसी एक की बात मान लो, और पुकारो उन्हें; पुकार कर उनसे बात करो और महसूस करो कि वह तुम्हारे साथ हैं। फिर उन्होंने आपको जो भी शास्त्र राही कहा, वह आपके जीवन में परिणत हो जायेगा। तत्पश्चात् आप कह सकोगे, "हे भगवान! जो धर्म आपने कहे हैं, मैं उनकी सजीव प्रतिमा बन जाऊँ"। पर कहीं आरम्भ तो करो!

आप क्यों नहीं कह सकते- "हे भगवान! मैंने नहीं देखा आपको, परन्तु आपके भक्तों ने- तुलसी, कबीर, मीरा, सखूबाई- इनने तो देखा है आपको, इनने तो आपकी बात करी है, वह झूठ नहीं कह सकते! आपके भक्त कहते हैं, फिर आप भी तो यही कहते हैं। मेरी बुद्धि ही नालायक है, मेरा मन

ही मूर्ख है, जो इसे समझ नहीं आती, परन्तु आप और आपके भक्त तो गलत नहीं कह सकते। आपका सौन्दर्य अपरिमित है, सबको मन्त्र मुग्ध करने वाला है। वह लोग, जो पावनता के पुंज हैं, उन्होंने ऐसा कहा है, वह आपका सौन्दर्य देखकर अपनी सुध-बुध भूले हैं, इस लिये यह निश्चित ही सत्य है।"

ऐसा सोच कर कम से कम आप उनकी शरण में तो जाओ, उनकी बात मानकर तो देखो, उन्हें आजमाकर तो देखो! भगवान जी को जीवन के कुछ वर्ष देकर तो देखो, फिर कहना- जो उन्होंने कहा, वह सत्य है या नहीं?

प्रश्न : भक्ति में अनन्यता कैसे आ सकती है? अनन्य भक्त का रूप क्या है?

पूज्य माँ : भगवान कहते हैं अनन्य भक्ति युक्त साधक उनको पा लेता है। यदि साधक की भक्ति श्री कृष्ण में अनन्य हो जाये, तो वह उनको जानना चाहेगा; उन्हें जानने के लिये गीता का, शास्त्रों का अध्ययन करेगा। उनकी जीवनी को पढ़ेगा, उनके जीवन का सार जानना चाहेगा।

भक्ति का अर्थ यह नहीं कि भगवान का जीवन बाहर कर दो और उनका नाम पुकारते रहो। 'कृष्ण' तो अनेकों लोगों का नाम है, और उनको हम इस नाम से पुकारते भी हैं; परन्तु वह भगवान तो नहीं, और न ही वह नाम हमारे हृदय में अंकित होता है। यह भेद नाम रूप का नहीं, यह भेद उनके जीवन का है। इसलिये नाम उनके जीवन से ही सप्राण होता है।

भक्ति तब तक न जानिये, जब तक आप केवल अपनी ही बात करते हैं। भक्त तो कहता है, "हे भगवान! आपकी रज़ा क्या है?" मीरा जी और सूरदास जैसे भक्त तो कहीं करोड़ों में एक होते हैं, उनके तो जन्म जन्म के संस्कार फ़र्क़ हैं। यदि हम समझें कि हम पहले ही दिन वैसे भक्त अथवा सन्त बन जायेंगे, तो हमें बहुत ग़लती लगती है।

जो लोग अपने को बुद्धिमान समझते हैं, उन्हें भगवान से पूछना ही पड़ेगा, "हे भगवान! आप क्या चाहते हैं? आपका हमारे लिये क्या आदेश है?" जब हम यह पूछेंगे तो गीता की शरण में जायेंगे, उस लोक के वासियों के पास जाकर पूछेंगे कि बताओ उस लोक के नियम क्या हैं? भगवान को कैसे रिझाया जा सकता है, फिर हम बार बार उनकी बात सुनेंगे और कहेंगे, "मुझे बार बार बताइये क्योंकि मैं बहुत जल्दी भूल जाता हूँ! जब तक मैं उस लोक में पहुँच ही न जाऊँ, आप मुझे बार बार सुनाइये सुनाते ही जाईये। मुझे तो भक्ति चाहिये, आपकी चरण रज चाहिये! आपका आदेश ही मेरे जीवन में

सर्वोत्तम महत्त्व रखता है। बस हर श्वास में, हर कर्म में आप ही के आदेश का पालन करना है मुझे! अब ऐसा नाम भरना है जीवन में मुझे कि बस नाम ही बाक़ी रह जाये।"

यदि भगवान का आदेश जीवन में मानना शुरु कर दिया, तो उन तक पहुँच ही जायेंगे। यदि पहली जमात से शुरु करोगे, तो अगली तक पहुँच ही जाओगे। तब तुम यह भी कह सकोगेः

"गर प्रेम की नैय्या डूब गई,
प्रेम सागर में डूबेगी।
तब प्राण पखेरू प्रेम रंगे,
नव जीवन में पा लूँगी।।

पर तुमसे कम अब न लूँगी!"

फिर भगवान ने स्वयं भी तो कहा है कि जो उन्हें तत्व से जानता है, यानि जानता है कि वह कैसे हैं, क्या करते हैं, जो उन्हें अच्छी तरह से जान लेता है, वह उनमें ही समा जाता है, उन जैसा ही हो जाता है। वह फिर कहते हैं- "सम्पूर्ण कर्म मेरे परायण होकर!" अर्थात् जैसा वह कहते हैं, वैसे ही कर्म कर।

हम लोगों ने पूजा में से जो कर्म का अंश निकाल दिया, इस कारण ही हमारा पतन होता जा रहा है। भगवान जब भी भक्ति की बात करते हैं;

ज्ञान की बात करते हैं, साथ ही कर्म की बात करते हैं। उन्होंने कहीं भी कर्म के त्याग की बात करी ही नहीं। हम ही मूर्ख कर्त्तव्य से पलायन करके "राम राम" कहना चाहते हैं, अथवा ज्ञान में रमण करना चाहते हैं। भगवान बार बार कर्म की बात करते हैं, वह तो स्पष्ट कहते हैं कि उन्होंने स्वयं भी कभी कर्मों को नहीं छोड़ा। भगवान जी ने जो भी आदेश दिया है, उसे कर्मों में परिणत करना तो अनिवार्य है।

वास्तव में यह जीवन कर्म की एक लम्बी श्रृंखला है। जीवन के रहते रहते कर्मों का त्याग हो ही नहीं सकता। भगवान कहते हैं, "तू इन कर्मों में मुझे भर ले, इन कर्मों को मेरे अर्पित कर दे।" उन्होंने कहा "मत्परमो मत्कर्मकृत्," यानि जो वह कह रहे हैं, वैसे ही कर्म कर, और उनके परायण हो कर कर्म कर।

जो भगवान को परम मानेगा, वह गीता को परम मानेगा। भगवान को परम मानने का अर्थ उनके जीवन को, उनकी कथनी को परम मानना है। भगवान कहते हैं, "मुझको परम मानकर तू वह कर

जो मैं तुझे कहता हूँ। इसी से तेरी भक्ति मुझ में बढ़ जायेगी, तेरा संग कम हो जायेगा और तेरा सम्पूर्ण संसार से कोई वैर नहीं रहेगा।" यह सब भगवान जी ने स्वयं कहा है।

हम समझते हैं कि जीवन और ज्ञान, जीवन और भक्ति, जीवन और पूजा अलग अलग चीज़ें हैं। पहले यह बात समझो कि यह अलग-अलग नहीं हो सकते। समझना यह है कि कौन से कर्म करने हैं। भगवान कहते हैं कि शास्त्र विधि के अनुकूल कर्म ही कर्म है। फिर वह यह भी कहते हैं कि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना ही श्रेष्ठ है; फिर यदि तू कर्म नहीं करेगा तो तेरा जीवन निर्वाह भी तो नहीं होगा। वह कहते हैं तू यज्ञ, तप, दान रूप कर्म कर, यह त्याज्य नहीं हैं, मनीषि गण भी इन कर्मों को करते हैं। यज्ञ अर्थ किये हुए कर्म बन्धनकारक नहीं। तू संग से मुक्त हो कर भगवान के निमित कर्म कर। यही पूजा है। भक्ति का प्रसाद भी यही है कि भगवान ने जो कहा, उसे हम जीवन में ला सकें। जितना जितना उसे जीवन में उतारेंगे, उतने ही आवरण हटेंगे, और हम पावन होकर भगवान के चरणों में अर्पित हो पायेंगे।

"ज्ञान गुमान न दे सके, ज्ञान तो नित्य झुकायेगा।
स्वरूप की गर चाहना है, तू पल पल झुकता जायेगा।।

गर केवल ज्ञान की चाहना है, अहं ही बढ़ता जायेगा।
अहंकार जितना बढ़े, स्वरूप दूर हो जायेगा।।

साध्य स्वरूप बनाइये, आन्तर्मुखी हो जाइये।
अपने प्रति तब ही तो, उदासीन हो पाइये।।"

❖ ❖ ❖

जग मिथ्या कैसे

पिता जी

ऋषिगण कहते हैं, 'ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या'! क्या यह ज्ञानियों के लिये कहा गया है या साधारण पुरुष के लिये? यदि साधारण पुरुष इसे मान ले तो यह केवल भय और दुःख का ही कारण हो सकता है। इसका रहस्य समझाईये।

सारांश

पूर्ण ब्रह्म है और ब्रह्म ही सत्य है। 'मैं', अहं, मोह, भ्रम, बुद्धि और मन ने आन्तर में एक महा जग रच लिया है.. जो संग, राग, द्वेष, तृष्णा तथा अज्ञानता से पुष्टित होता है, वह आन्तरिक जग मिथ्या है। 'ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या' साधारण लोगों के लिये कहा गया है, ज्ञानी तो यह जानते ही हैं।

प्रश्न अर्पण

ब्रह्म सत्यं और जग मिथ्या, ऋषिगण यह कहते हैं।
ज्ञानी गण को कहते हैं, या हम जैसों को कहते हैं।।१।।

हम जैसे गर मान लें, केवल भय और दुःख ही हो।
रहस्य इस सिद्धांत का क्या, भगवान मेरे यह तुम कहो।।२।।

तत्व ज्ञान

पूर्ण सत् है पूर्ण ज्ञान, अखण्ड तत्व वह सत्त्व है।
अखिल रूप वह खण्डित हो, अद्वैत रूप वह सत्त्व है।।३।।

पृथक्कर भाव ही मिथ्या है, यह अहंकार ही मिथ्या है।
कर्तृत्व भाव भोक्तृत्व भाव, मनो मान्यता ही मिथ्या है।।४।।

पूर्ण पे आरोपित जो, यह मनोजाल ही मिथ्या है।
जीव का जग वा मन ही है, इस कारण कहें वह मिथ्या है।।५।।

दूजे को मिथ्या जब कहो, तब लौ ही जग मिथ्या है।
निज मिथ्यात्व से जब उठे, फिर नहीं कुछ मिथ्या है।।६।।

मन बुद्धि को सत्य कहो, अपने तन को सत्य कहो।
जग को मिथ्या गर कहो, मिथ्या ही तुम कहते हो।।७।।

जिस जग की यहाँ बात कहें, तव आंतरिक जग की कहें।
अवास्तविकता को सत्य कहें, भ्रमपूर्ण मन को मिथ्या कहें।।८।।

अज्ञान और मोह बधित, संगी मन को सत्य कहें।
भय दुःख तब लौ ही है, जब लौ महा असत् में रहें।।९।।

जग है क्या यह समझ ले, सिद्धांत तो यह सत्य ही है।
बाह्य लोक की बात नहीं, आंतरिक लोक यह जग ही है।।१०।।

जग कही अज्ञानी मन, पूर्ण को ही मिथ्या कहे।
जग और सत् में भेद समझ, पल में राज़ यह खुल जाये।।११।।

देख मना तू समझ सही, कौन बात वह कहते हैं।
जग मिथ्या है ब्रह्म सत्य, फिर पूर्ण ब्रह्म भी कहते हैं।।१२।।

जग मिथ्या पर जग ब्रह्म, और पूर्ण ब्रह्म वह कहते हैं।
फिर कौन जग जो मिथ्या है, यह ऋषिजन क्या कहते हैं।।१३।।

बाह्य जग को समझ ले, मिथ्या नहीं वह कहते हैं।
राम रूप है जग सारा, शास्त्र यह भी कहते हैं।।१४।।

'मैं' को कहो 'मैं' मिथ्या नहीं, आपको ब्रह्म जो कहते हो।
वा जग मिथ्या कह करी, फिर भ्रम उसको कहते हो।।१५।।

गर 'मैं' तन हूँ यह माने हो, संग 'मैं' ब्रह्म हूँ यह माने हो।
'मैं' चेतन हूँ अखण्ड आनंद, यह सब कुछ तुम माने हो।।१६।।

गर 'मैं' ब्रह्म है तो जानो, हर 'मैं' ब्रह्म ही होयेगी।
गर 'मैं' ही भ्रम है तब समझो, हर 'मैं' भ्रम ही होयेगी।।१७।।

यह पूर्ण ब्रह्म अखण्ड है, वह तो एक है जान लो।
और मैं यह 'मैं' तो है नहीं, इस का राज़ भी जान लो।।१८।।

'मैं' तन भी नहीं हो सके, 'मैं' यह मन न हो सके।
'मैं' बुद्धि यह नहीं रचे, और 'मैं' कहीं न हो सके।।१९।।

यह 'मैं मैं' का जो खेल है, यह 'मैं' का जो यहाँ मेल है।
यह संग हुआ जो 'मैं' का, मिथ्या जग का खेल है।।२०।।

ज्ञान-विज्ञान सहित

समझ मना तू समझ सही, तोरा आपुनो मन ही मिथ्या है।
यह मनो रचित कल्पित जग, पूर्ण ही यह मिथ्या है।।२१।।

आप ही देखो तब जानो, यह लीला है हो रही।
गुण गुणन् में वर्ते गये, गुण राही तोरी तन रची।।२२।।

मन भी गुण राही बना, बुद्धि भी तोरी बन गई।
जो जाग उठा वा की दृष्टि, राज़ इसका देख सकी।।२३।।

आंतर में निज जाये करी, इस 'मैं' का लोक अब देख लो।
यह मनो लोक है भ्रम लोक, मिथ्या लोक यह देख लो।।२४।।

मन ने है यह लोक रची, बुद्धि रचना तुम कह लो।
यह भ्रम मनो कल्पना है, यह मिथ्या है तुम कह लो।।२५।।

'मैं' ही जानो मिथ्या है, 'मैं' किसी को न भाये।
बार बार यह 'मैं' ही तो, जग की 'मैं' सों टकराये।।२६।।

मिथ्यात्व सों प्यार कौन करे, 'मैं' सों प्यार कौन करे।
'मैं' सों 'मैं' पन मिट जाये, 'मैं' शब्द न मौन रहे।।२७।।

मिथ्या है यह इस कारण, स्थापित होना चाहती है।
सत् होती तो रहती मौन, मिथ्या कुछ सह नहीं पाती है।।२८।।

यह 'मैं' ही है जो बार बार, मन बुद्धि को भड़काये।
मिथ्या बुद्धि भड़के है, मिथ्या मन तड़प जाये।।२९।।

मन बुद्धि 'मैं' अहंकार, सम्पूर्ण मन के हैं विकार।
अज्ञान मोह करे उत्पन्न, जान मना मिथ्या संसार।।३०।।

सत् चित् आनंद लोक, में मिथ्यात्व यह 'मैं' ही है।
दुःख मोह अज्ञान दे, 'मैं' कारण बस संग ही है।।३१।।

भ्रम लोक अज्ञान रचित, कल्पित लोक यह आंतरिक है।
असत् लोक अज्ञान रचित, मिथ्या लोक यह आंतरिक है।।३२।।

यह 'मैं' ही है जो मिथ्या है, 'मैं' का लोक ही मिथ्या है।
'मैं' ने जग जो आप रचा, वह 'मैं' ही तो मिथ्या है।।३३।।

बाक़ी पूर्ण ब्रह्म है, ब्रह्म से उठे वहीं जाये मिले।
अनेकों वा ने रूप धरे, पूर्ण वह पूर्ण ही रहे।।३४।।

'मैं' व्यक्तिगत करती है, पूर्ण से वह पृथक करे।
अपना लोक यह भिन्न रची, अपने लोक में राज्य करे।।३५।।

सहज गुण सों संग करे, कर्ता निज को माने है।
गुण गुणन् में वर्त रहे, गुण स्वभाव न माने है।।३६।।

पूर्ण ही है अखण्ड रस, इसको कैसे यह मान ले।
शास्त्र कथन गर सच माने, तो 'मैं' बेचारी कहाँ रहे।।३७।।

अहं दम्भ और राग द्वेष, का जग जो मिट जायेगा।
कल्पित राज्य इस 'मैं' का, इक पल टिक न पायेगा।।३८।।

अपने आंतर जाये करी, इस मिथ्या लोक को देख तो लो।
शास्त्र कथित सत् ज्ञान की, राही मिथ्यात्व को देख लो।।३९।।

सत् को निज मिथ्या जग में, 'मैं' कैसे कभी आने दे।
बुद्धि मन सत् संगी भये, तो 'मैं' बेचारी कहाँ रहे।।४०।।

वह भयभीत ही रहती है, कहीं यह 'मैं' ही नहीं रहूँ।
कैसे अपने प्राण तजे, कहे मैं कुछ न समझ सकूँ।।४१।।

दम्भ अहं का रूप धरी, 'मैं' ही विघ्न बन जाती है।
मन बुद्धि भड़काये करी, मोह अज्ञान बढ़ाती है।।१०।।

मिथ्या जग यह रच करी, आरोपित सत् यह करती है।
सत् तो नित्य ही मौन रहे, 'मैं' ही है जो अकड़ती है।।४३।।

अज्ञान रहे बलवान रहे, ज्ञान मिले वहाँ अहं भरे।
यथार्थ ज्ञान हो जीवन में, यह 'मैं' कभी न सह सके।।४४।।

यह मिथ्या 'मैं' ही होये है, वाष्प मात्र है जान लो।
यह संग करे कर्ता भये, मिथ्या यही है जान लो।।४५।।

पूर्ण ब्रह्म है जान लो, यह जग ब्रह्म है जान लो।
यह 'मैं' का संग यह 'मैं' का जग, यह मिथ्या है जान लो।।४६।।

अहं कृपा गर हो जाये, उजियारा हो जायेगा।
सत् सों संग गर हो गया, तब ही हो यह पायेगा।।४७।।

मिथ्या जग मिट जायेगा, केवल सत् रह जायेगा।
उस पूर्ण की पूर्णता में, 'मैं' ही जब समायेगा।।४८।।

२६.१.१९६७

कुछ संस्मरण

श्रीमती सत्या महता

शास्त्रों राही कई बार सुना है कि संत और गुरु कृपा से अनेकों क्लेशों से मुक्ति मिल जाती है। इसकी प्रक्रिया व प्रमाण के दर्शन का सौभाग्य मुझे पूज्य माँ के सम्पर्क में आने के पश्चात् मिला। वैसे तो उनकी कृपा से हमारे जीवन का सम्पूर्ण रंग-ढंग ही बदल गया.. परन्तु आज अपनी धन और वस्तुओं से संग की वृत्ति के परिवर्तन का वृतान्त सुनाती हूँ।

बात बहुत पुरानी है.. 1958 की, जब हमारा पूज्य माँ से सम्पर्क हुआ। पहले दिन के सम्पर्क से ही माँ की विनम्रता को देख ऐसे लगा जैसे कि जीवन में जिसकी मुझे तलाश थी, वह मिल गया हो। पूज्य माँ का झुकाव देख कर ऐसा लगने लगा.. जैसे कि मेरी श्रेष्ठता को पहचानने वाला भी कोई है। यही मेरी निहित माँग थी। उनसे इस दीर्घकाल के सम्पर्क के परिणामस्वरूप यह जाना कि गुरु की कृपा से दृश्य-अदृश्य अथवा प्यार व मेहनत से हम जैसे साधारण जीवों का आन्तर कैसे धीरे धीरे बदलता जाता है, और पावनता की ओर बहने लगता है।

पूज्य माँ तीनों स्तरों पर मेरी सेवा करने लगे। तन की कोई ज़रूरत होती तो वह मेरे बिन कहे ही पूरी कर देते। कहीं जाना हो, कहीं बाजार से कुछ लाना हो, तो झट काम पूरा हो जाता।

बच्चों से इतना प्यार करते कि उनके साथ उनकी छोटी बहिन बन कर खेला करते। अपनी निजी उपाधि को भुला कर, उसे एक ओर धर कर, निज बड़प्पन का मान किये बिना नन्हें शिशुओं के साथ एक हो जाते ।

मनोस्तर पर न केवल मुझे श्रेष्ठता देकर ख़ुश रखते बल्कि साथ ही साथ मुझमें श्रेष्ठता के गुण लाने के साधनों का प्रयत्न भी करते रहते।

बुद्धि स्तर पर कहा तो मुझे करते कि, "तू मुझे ज्ञान बता," परन्तु बातों बातों में गुह्यतम तात्त्विक ज्ञान दे देते, जिसे तब तो मैं समझ ही नहीं पाती थी.. परन्तु आज उन्हीं शब्दों को समझ कर अपने जीवन में उतारने के प्रयत्न करती हूँ।

पूज्य माँ की इन तीनों स्तरों की सेवा से मेरा उनमें विश्वास बढ़ता जाता था और मेरे इसी विश्वास के बल पर पूज्य माँ मेरी आंतरिक वृत्तियों को बदलने के भी प्रयत्न करते रहे।

आप को पूज्य माँ के साथ सम्पर्क के प्रारम्भिक दिनों की एक झलक देती हूँ.. किस प्रकार उन्होंने मेरा धन और स्थूल विषयों से संग कम किया।

संग ही हमारे सम्पूर्ण दुःख का कारण है और जो प्यार करता है, वह हमें सुखी बनाना चाहता है। पूज्य माँ तो हैं ही प्रेम स्वरूप! उनके सब कर्म उनके दिव्य प्यार से ही बहते हैं। उन्होंने जब देखा कि मेरा संग धन से और स्थूल वस्तुओं से बहुत है, तब वह मुझे बिन बताये और जताये इस संग को कम कराने के लिये अनथक मेहनत में लग गये।

कभी पूज्य माँ मुझे महीने के मध्य में ही कहने लग जाते, "बहनू! मेरे पास पैसे ख़त्म हो गये हैं, मुझे 100 रुपये दे दो, अगले महीने लौटा दूँगी"। मेरा भी उनसे इतना प्यार हो चुका था कि मैं उन्हें किसी प्रकार से तंग देखना नहीं चाहती थी। एक ओर तो 100 रुपये दे देती, साथ ही दो चार कठोर शब्द भी सुना देती, "इतने पैसे आप को मिलते हैं, इतनी जल्दी ख़त्म कैसे हो जाते हैं? ध्यान से ख़र्च किया करो।"

दूसरी ओर पूज्य माँ वही 100 रु. एक लिफाफे में डालकर अलमारी में रख देते और साथ ही लिफाफे के ऊपर लिख देते कि यह पैसे अमुख महीने की इस तारीख को लौटाने हैं सत्या बहिन को!

पूज्य माँ को तो पैसे चाहिये नहीं होते थे, फिर भी मेरे कल्याण अर्थ, मेरी लोभ की व धन से संग की वृत्ति को कम करने के लिये वह बार बार ऐसा करते गये और मेरे से खरी ख़ोटी सुनते गये।

जब पूज्य माँ ने देखा कि अब यह इस तरह तो पैसे देने लग गई है और इसे विश्वास भी हो गया है कि पैसे वापिस मिल जाते हैं.. तो उन्होंने फिर मेरा अगला क़दम बढ़वाने के लिये कुछ ढंग

बदल दिया। एक दिन कहने लगे, "बहनू, एक लड़का बड़ा ग़रीब है, उसे दूध के लिये पैसे देने हैं! थोड़े से पैसे दे दो।" पहले तो मैंने हमेशा की तरह दो-चार सुनाईं और अपने स्वभाव अनुसार कहा "क्या पता भी कर लिया है कि वह सच ही ग़रीब है भी या नहीं?" और फिर 50 रु दे दिये। पूज्य माँ ने 50 रु मेरे से लेकर 100 रु स्वयं अपने डालकर 150 रु. उस ज़रूरतमन्द को दे दिये। इस तरह मेरे अभ्यास के लिये कुछ देर वह ऐसा करते रहे, जिससे मेरा संकुचित हृदय कुछ कुछ विस्तार पाने लगा।

आज मैं यह सब देख सकती हूँ और कह सकती हूँ, परन्तु उस समय तो यह सब मेरे अनजाने में होता रहा.. आज जो देख रही हूँ यह पूज्य माँ की अनथक मेहनतों का ही परिणाम है जो उन्होंने मुझे कभी ज़ाहिर तक नहीं किया।

पूज्य माँ के साथ इतने साल रहते रहते जीवन में कई उतराव चढ़ाव आये। हर परिस्थिति राही भी पूज्य माँ मेरा धन से संग कम करवाने का अभ्यास कराते रहे। आज यदि धन को उसका उपयुक्त स्थान दिया जाता है और धन से संग अपेक्षाकृत कम दीखता है तो यह साधना तो पूज्य माँ ने ही दिनचर्या में स्वयं करी.. मेरे द्वारा अपमान सह सह कर भी वह मुझे सही पथ पर चलाते गये।

यह लोभ की, धन से संग की वृत्ति.. कहने में तो छोटी सी वृत्ति है परन्तु इसके आन्तर में छिपी सूक्ष्म में जो अनन्त वृत्तियाँ हैं, उसे भी गुरु अपनी कृपा से साफ करते जाते हैं। अपने शिष्य को उठाने और सत्य पथ पर ले जाने में ही उनकी कृपा का राज़ छिपा है। अपने को भूले हुए वह सब प्रहार स्वयं सहकर भी निरन्तर अपने सम्पर्क में आये शिष्य के हित में लगे रहते हैं। ❖

साधना के कुछ सोपान

(धारवाड़ में 1965 में प्राप्त सत्संग पर आधारित)

(संकलन- श्रीमती शीला कपूर)

इक संसारी, इक साधक- इनमें अन्तर केवल इतना ही है कि इनके विचार, व्यवहार, वाणी, कर्म तथा सेवा प्रणाली भिन्न हैं और उनके पीछे मौलिक उद्देश्य में भी निहित भेद है। जीव के सम्मुख निम्नलिखित दो राह हैं :-

यदि हमारे कर्म निजी लाभ अथवा अहं स्थापना अर्थ हों तो इससे केवल अहंकार ही फलीभूत होगा। पारस्परिक व्यवहार में निहित हमारी महत्त्वाकांक्षा, हर शक्ति का प्रयोग उसी ओर करेगी।

यदि पुरुषार्थ का भाव प्रधान हो तथा दूसरे की सेवा करने का प्रयोजन निरन्तर बना रहे, तो दृष्टि इस पर रहेगी कि मैंने तो अपने सुधार अर्थ यह करना है तथा अहं मिटाव, स्वार्थ त्याग, बुद्धि समर्पण तथा श्रद्धा-भक्ति का पथ अपनाना है। जग की सेवा केवल मेरी साधना सामग्री है।

प्रारम्भिक अभ्यास की बेला पुरातन रूढ़ियाँ बारम्बार उसी कार्य प्रणाली में घुमा फिरा कर स्वार्थ की ओर ही आकर्षित करेंगी; किन्तु चेत स्तर पर जीते हुए, यदि निश्चित ध्येय पर से दृष्टि न उठे तथा पल-पल उसका नाम जपन और सिमरन रहे, तो ऐसा नहीं हो पायेगा। यदि तृप्ति हाथ आती न दीखे तो असन्तुष्टि का भाव ही लानत देगा, "मूर्ख! क्यों जीवन व्यर्थ गँवा रहा है, अनित्य के पीछे पीछे भाग कर? लेना है, तो नित्य को साथ ले।"

साधना की चार प्रमुख सीढ़ियाँ हैं:

1) सर्वप्रथम साधक का सम्पर्क किसी गुरु अथवा अध्यात्म ज्ञान में कुशल किसी विशिष्ट व्यक्ति अथवा अवतार की वाणी से हुआ। उससे प्रभावित हो कर वह उसकी सराहना करने लगा और उस के ज्ञान को खुले आम दर्शाने लगा। ऐसा करके वास्तव में तो साधक अपना नाम ही बना रहा है। हेर फेर से वह सबको यही जतलाना चाहता है कि मैं एक ऐसे अनूठे व्यक्ति की जानकारी रखता हूँ।

ऐसे गुरु के मुख से शास्त्र ज्ञान सुनकर यदि वह मानने लगे भी कि मेरी भी यही स्थिति है, तो यह उसकी भूल है। गंगा की राह दिखाना और बात है, परन्तु वहाँ पहुँचना और! इसी प्रकार ज्ञान कहना और बात है, किन्तु अपने जीवन में उसे प्रमाणित करना इतना सहज नहीं।

2) इस स्तर पर साधक को यह आभास होने लगता है कि उसका अहंकार पूर्ण ज्ञान तथा झूठी प्रीत जताना निःस्वार्थ नहीं हो सकता। अपने तनो कर्म, मनो कर्म तथा बुद्धि कर्म अहं वृत्ति से ओत-प्रोत देख कर वह प्रत्यक्ष अनुभव करने लगता है कि, "जो मैंने जाना है, वह मैं बना नहीं। ज्ञान को जान कर भी मैंने उसे जीवन में माना नहीं, इस कारण न तो दृष्टिकोण परिवर्तन हुआ और न ही वह दैनिक जीवन में उतरा जो विज्ञान रूप दर्शाने लगता।" अब यह सहन कैसे हो पाये?

3) अब साधक की क्षमता कुछ और बढ़ी तो उसे पता चला कि ऐसे ज्ञान से क्या होगा जो मेरे जीवन में मूर्तिमान न हो सके? अपनी आँखों के सामने ही अपने आन्तर के दर्शन मानो जीव के गुमान को पूर्णतया छिन्न भिन्न कर देते हैं व मनुष्य आश्चर्यचकित रह जाता है। वह स्वप्न में भी कभी किसी के कहे यह न मान पाता कि आन्तर मल उसे इतना आवृत कर सकती है। यह ही तृतीय नयन का खुलना है। ऐसी भावनाओं का उत्थान यदि निजी जीवन में प्रतिबिम्बित न हो तो हमारे सारे पल केवल अज्ञानजम रात्रि के अंधकार मे ही खोते चले जायेंगे। साधक की राह के यह काँटे होंगे, सहायक नहीं।

4) अन्त में साधक का भरसक प्रयत्न यही होता है कि निजी मौलिक प्रेरणाओं तथा उत्तेजक वृत्तियों की ठीक ठीक से जाँच हो। इसके लिये परम आवश्यक साधन यह होगा कि अपना पूर्वानुमान, निजी अनुभव, तथा अपनी ही मान्यता राहों में न आये। मनोस्तर और बुद्धि स्तर, दोनों पर सचेत होकर वह अपने आंतर की प्रतिकार झंकार परखने लगता है। जैसे जैसे वह आत्म निरीक्षण करता जाता है, परिस्थितियों में, जीवन के रंगमंच पर पृष्ठ पलटते जाते हैं। इस विधि से बाह्य संसार में वह स्वप्नवत् अपनी डगर नापता जाता है।

5) याद रहे साधक की दृष्टि पूर्णतया अपने पे केन्द्रित है; मनो जग पे आसन लगा कर ही वह समाधिस्थ हुआ है। बाह्य परिस्थितियों की ओर उसकी आँख उठती ही नहीं। हाँ! कोई काज कर्म सामने आ जाये, तो उसका तन दक्षता पूर्ण स्थूल कर्म सम्भाल लेता है और यन्त्रवत् उसे कर भी डालता है। वह बड़ी उत्तम रीति से कर्म कुशल ही होगा, क्योंकि उसका मन तो भगवान के चरण-स्पर्श किये बैठा है। बाह्य जग से अप्रभावित होते हुये वहाँ एक ही लक्ष्य को साधा जा रहा है।

केवल निष्कपट रूप से एक बार आँख खुलने की देरी है । साधक के लिये एक बार अपने वास्तविक गुण तथा आवरण का आधार स्पष्ट हो जाये तो उसके छिपाव का प्रश्न ही नहीं उठता, न ही मनोग्रंथियों की प्रतिरक्षा की चाह ही रहती है। निरर्थक कश्मकश फिर स्वतः ही पूर्णरूप से शान्त हो जायेगी। तब वह क्षण आयेगा जब ज़िन्दगी उसके लिये सहज खेल बन जायेगी और हंस कर वह इस जीवन संग्राम को पार कर लेगा।

"साधना मन की मन में हो, मन को मन निहारे है।
भावना अपनी सामने थी, भावना मन को पुकारे है।।

जो भावना में सत् माने, उस सत् पे जब न चल पायेगा।
मन देखी विघ्न राहों में, मन ही मन वह घबरायेगा।।

आन्तर मन में बैठ करी, जो निहित मन को देखे है।
निहित पुकार जो छिपी हुई, उस ओर जो साधक देखे है।।

शुद्ध भावना शुभ्र भाव, सामने ही वह धर लेगा।
मूर्तिमान वह सद्भावना, अपने में ही कर लेगा।।

साक्षी उसे बनाये करी, अपुनो मन निहारेगा।
अपना आप वह देख करी, सद्भावना को पुकारेगा।।"❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
दिसम्बर 2023

आश्रम संस्मरण

उर्वशी दिवस

परम पूज्य माँ के मुख से प्रवाहित स्वतः स्फुरित प्रवाह, 'उर्वशी', 2 अक्टूबर 1958 को, एक ज्ञान की सरिता के रूप में बहा.. दिव्यता का यह अवतरण हमारे हृदयों एवं बुद्धि को वास्तविकता से अवगत कराने में सक्षम बनाता है।

अर्पणा परिवार, स्टाफ़ एवं मित्रगण परम पूज्य माँ के समाधि स्थल, 'आशीर्वाद' पर इस दिव्य उपहार के लिये अपनी श्रद्धापूर्ण कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए एकत्रित हुए।

साधना, व्यावहारिक स्तर पर

शास्त्रों एवं ग्रंथों के राही हमें बताया गया है कि हम सब उस पूर्ण की पूर्णता को मानते हुए अच्छे इनसान बनें और सभी की सहायता के लिए जो कुछ भी कर सकें, वह करें। इस प्रकार निष्काम कर्म करते हुए मानवीय मूल्यों के व्यावहारिक प्रयास से अहंकार लुप्त हो जाता है।

अर्पणा सेवा गतिविधियाँ इसी 'व्यावहारिक पूजा के मंदिर' के रूप में आरम्भ की गईं जिससे साधकों को अपने मन और बुद्धि को शुद्ध करने में सहायता मिल सके।

इसी उद्देश्य से, अर्पणा अस्पताल का निर्माण किया गया, ताकि, अनुकंपापूर्ण चिकित्सा एवं देख रेख से सब की सेवा करते हुए, व्यक्ति स्वयं को भुला पाये।

अर्पणा अस्पताल की 43वीं वर्षगांठ 2 अक्तूबर 2023 को, प्रेमपूर्वक, अर्पणा के परिवार, स्टाफ़ एवं वहाँ पर उपस्थिति सभी जनों द्वारा मनाई गई।

श्रीमती सोनू भोजवानी ने सतीश कुमार को 25 वर्षों की सेवा के लिए प्रशंसा प्रमाण पत्र से पुरस्कृत किया।

अर्पणा अस्पताल

एनएबीएच - मान्यता प्राप्त हुई

अर्पणा अस्पताल ने सफलतापूर्वक एनएबीएच से प्रत्यायन मान्यता प्राप्त की (राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड अस्पताल और स्वास्थ्य सेवा प्रदाता।)

अर्पणा अस्पताल ने 3 नवंबर 2023 को, एक यादगार दिवस के रूप में मनाया। इस अवसर पर एनएबीएच मान्यता प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले सदस्यों एवं कर्मचारियों को एनएबीएच प्रमाण पत्र वितरित किये गये।

◆ डॉ. आर.आई. सिंह, डॉ. अनुराधा महाजन, डॉ. सुवेंदु शेखर पांडा, और 64 डॉक्टरों एवं स्टाफ़ सदस्यों को उनके एनएबीएच मान्यता प्राप्त करने में योगदान के उत्कृष्ट प्रदर्शन के लिए सम्मानित किया गया।

◆ एसएचजी महिलाओं ने असुरक्षा की भावना से स्वास्थ्य, सामाजिक और वित्तीय स्थिरता की ओर अपनी 25 वर्ष की यात्रा पर एक लघु नाटक प्रस्तुत किया।

अर्पणा अस्पताल के मुख्य प्रबंधक और 150 स्टाफ़ सदस्य यहाँ उपस्थित थे।

प्रेम नगर में अर्पणा का नया क्लिनिक

हमारा उद्देश्य, सब का स्वस्थ्य! अर्पणा अस्पताल द्वारा 25 नवंबर को 722 प्रेम नगर, करनाल में एक क्लिनिक का उद्घाटन किया गया। यहाँ अर्पणा अस्पताल के मुख्य प्रबंधक, अर्पणा परिवार के कुछ सदस्य, 5 चिकित्सा सलाहकार एवं स्टाफ़ के 30 सदस्य भी उपस्थित थे। तत्काल स्वास्थ्य आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए उद्घाटन का उत्साह और भी बढ़ गया जब वहीं पर एक निःशुल्क स्वास्थ्य शिविर के अन्तर्गत 90 रोगियों की जाँच की गई।

क्लिनिक सुबह 10:00 बजे से शाम 7:00 बजे तक खुला रहेगा। ओपीडी संचालित करने के लिए डॉक्टर उपलब्ध रहेंगे।

मोलर बंद, नई दिल्ली में कार्यक्रम

अनन्या, एक अनाथ बच्ची, अपनी दादी और दो बहिनों के साथ मोलर बंद में रहती है। वह प्री-स्कूल से अर्पणा के शिक्षा केन्द्र में पढ़ रही थी। उसे 2023-24 के 'टाटा बिल्डिंग इंडिया स्कूल एस्से कोंपीटिशन' में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। उसने 'वन रहेंगे तो हम रहेंगे' के विषय में हिन्दी में निबन्ध लिखने पर एक प्रमाण पत्र एवं मेडल प्राप्त किया।

ग्रामीण हरियाणा

ग्रामीण लोगों को सरकारी चिकित्सा लाभ प्राप्त करने में सक्षम बनाना

कांता, अर्पणा द्वारा गठित, श्री राम स्वयं सहायता समूह की सदस्य एवं उनके पति, विक्रम, गाँव मुगल माजरा में रहते हैं। उनका एक बेटा है और उन्होंने एक बच्ची, विधि, को गोद लिया है, जिसे थैलेसीमिया की बीमारी है। बच्ची का हर महीने खून बदलना पड़ता था- जिसका वित्तीय बोझ बहुत अधिक था।

यह पता चलने पर श्री ईश भटनागर ने एक विकलांगता चिकित्सा प्रमाण पत्र प्राप्त करके उसके लिए सरकारी अस्पताल से इलाज करवा दिया जहाँ यह इलाज मुफ़्त होता है। यह परिवार के लिए बड़ी राहत की बात थी। फेडरेशन और अर्पणा ने भी कांता को आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाई। इस सहायता और समर्थन के लिए वह सब की बहुत आभारी है।

अपने गाँवों को हरा-भरा बनाया- एसएचजी महिलाओं ने पेड़ लगाये

अत्यंत खुशी और उत्साह के साथ, 106 गाँवों से 1004 स्वयं सहायता समूहों की 2,491 महिलाओं ने अक्तूबर में अपने गाँवों में 2,491 पेड़ लगाये। यह अर्पणा एवं एसएचजी सामूहिक संघ का प्रयास था।

यह न केवल पर्यावरण के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को दर्शाता है बल्कि समुदाय के नेतृत्व की परिवर्तनकारी शक्ति की पहल को भी रेखांकित करता है।

एसएचजी स्वयंसेवक पौधे वितरित करते हुए

वसंत विहार

ज्ञान आरंभ में दिवाली उत्सव

ज्ञान आरंभ में दिवाली उत्सव पर 4-12 तक की कक्षाओं के छात्रों के लिए दीये, पेपर बैग, उपहार टैग, और कार्ड बनाने की गतिविधियाँ आयोजित की गईं। यह सभी दिवाली के उपलक्ष्य में 'ज्ञान आरंभ' के मित्रों, उनके परिवारों एवं अनुदान दाताओं को भेंट स्वरूप दिये गये।

यहाँ पर स्वयंसेवकों ने दिवाली उपहार के रूप में 'ज्ञान आरंभ' छात्रों के लिए मिश्रित ड्राई फ्रूट के पैक दिये। 'ज्ञान आरंभ' के पूरे स्टाफ़ को टिफिन बॉक्स में ड्राई फूट उपहार में दिये।

हिमाचल प्रदेश कार्यक्रम

31 अक्तूबर को श्री पी.सी. कपूर हिमाचल प्रशासनिक सेवा (सेवानिवृत्त), जो पिछले 24 वर्षों से अर्पणा के हिमाचल केंद्र के निर्देशक रहे हैं, को उनकी सेवानिवृत्ति पर सम्मानित किया गया। हिमाचल में अर्पणा की सफलता में उन्होंने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी विरासत को लंम्बे समय तक याद किया जायेगा!

मिस्टर एवं मिसेज़ कपूर (बीच में), हरिश्वर दयाल एवं अरुणा दयाल

हस्तशिल्प बिक्री - पूर्ण लाभांश परहित के लिए

डॉ. राज, राहुल और लीना गुप्ता ने 3 दिवसीय दिवाली सेल की मेज़बानी की

27-29 अक्टूबर को, डॉ राज, राहुल और लीना गुप्ता, ने फ्रेंड्स कॉलोनी स्थित अपने खूबसूरत घर में दिवाली सेल आयोजित की.. जहाँ उत्तम कढ़ाई वाली घरेलू वस्तुएं, नाइटवियर और बच्चों के परिधान इत्यादि उपलब्ध थे।

गुणवत्ता ग्राही खरीददारों ने इन नाजुक ढंग से हस्तनिर्मित वस्तुओं को खरीद कर गाँव के परिवारों में खुशहाली लाने में सहायता की!

अर्पणा के कार्यक्रमों में उदारता से समर्थन देने के लिए हम बैजनाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, श्री रविंदर बहल और श्रीमती सुषमा अग्रवाल (नई दिल्ली) के साथ-साथ अवीवा लाइफ इंश्योरेंस, इंडिया, श्री सुरेश मोतीराम शिवदेसानी के बहुत आभारी हैं!

EMPOWER VULNERABLE WOMEN AND CHILDREN AS THEY REACH FOR THEIR DREAMS!

ARPANA TRUST

EDUCATION FOR DISADVANTAGED CHILDREN

- Tuition support for classes 1-12 pre-school Classes for toddlers, cultural activities.
- Vocational training classes.

HUMANE VALUES FOR AN EQUITABLE SOCIETY

- Dramas, Publication, Satsangs
- Charitable grants for the vulnerable
- Health/Socio economic assistance

DONATE ONLINE

ARPANA RESEARCH & CHARITIES TRUST

PROVIDES MODERN HEALTH CARE THROUGH

- Arpana Hospital for free /affordable health care.
- Arpana Medical centre, Himachal

EMPOWERING WOMEN

- Self Help Group & SHG Federations.
- Micro – Credit, Income generation, community development

EMPOWERING THE DIFFERENTLY ABLED

- Differently Abled Persons Organizations for health, assistive devices, certifications and income generation.

DONATE ONLINE

DONATIONS TO ARPANA ARE 50% TAX EXEMPT UNDER SECTION 80G, INCOME TAX ACT 1961

Cheques in favour of Arpana Trust to be sent to:
Information & Resources Department
Arpana, Madhuban, Karnal- 132037, Haryana
Email: arct@arpana.org | at@arpana.org

Donations through Direct Bank Remittance:
Bank of India, Karnal (IFSC Code: BKID0006750)
Arpana Research & Charities Trust; Bank Account No. 675010100100014,
Arpana Trust Bank Account No. 675010100100001

FOREIGN DONATIONS TO ARPANA TRUST ARE 100% TAX EXEMPT WHEN SENT THROUGH:

Arpana Canada
Mrs. Sue Bhanot, 7 Scarlett Drive, Brampton,
Ontario L6Y 359 Canada
Email: suebhanot@rogers.com

India Development & Relief Fund (IDRF)
Mr. Vinod Prakash, President, IDRF, 5821 Mossrock Drive,
North Bethesda, MD 20852 USA
E mail: vinod@idrf.org

Contact Us: Harishwar Dayal, Executive Director +91 98186 00644
Aruna Dayal, Director Development +91 99916 87310

Email us: arct@arpana.org | at@arpana.org
Websites www.arpana.org www.arpanaservices.org

'स्टिचेज़ ऑफ लव' - नई दिल्ली में डॉ. गुप्ता के निवास स्थान पर हुई हस्तशिल्प प्रदर्शनी की कुछ झलकियाँ

परम पूज्य माँ का आशीर्वाद लेकर प्रदर्शनी की शुरुआत की गई

अर्पणा के प्रकाशन

दिवाली के लिए गिफ्ट पैक
बहुत पसंद किये गये

मोलर बंद के बच्चों की
हस्तकला का प्रदर्शन

प्रदर्शन पर दीये,
मोमबत्तियाँ और सजावटी पौधे

इस ज्योत की ज्योत से ज्योत जले

इस ज्योत की ज्योत से ज्योत जले, फिर मम जग ज्योतिर्मय हो।
इस ज्योत की ज्योत से अग्न लगे, जग विषय कर्म का क्षय हो।।

ज्योति से दिल तड़प उठे,
यह मन तुझी में लय हो।
जो रंग रंगे तेरी ज्योति,
जग विषय कर्म का क्षय हो।।

इस ज्योत में ऐसा भान करूँ, मम शव इसी में क्षय हो।
'मैं' और 'मेरा' रोज़ जले, ज्यों जलेगा जब प्रलय हो।।

इस हृदय में तेरी प्यास लगे,
मम जीवन तव रंगमय हो।
इस ज्योत में नित तुझको देखूँ,
मम हृदय भक्तिमय हो।।

- परम पज्य माँ

Published in December 2023 for Arpana Trust, Madhuban, Karnal Regd. No. RN 30710/77